THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY

प्रकाशक—
मंत्री,
राष्ट्रीय प्रकाशन-परिषद्,
भभुआ (शाहाबाद)

मुद्रक—
रामावतार लाल
नेशनल प्रेस,
पटना।

लेखकीय

अधिकांश जन साधारण बोल-चाल में नित्य-प्रति ऐसे शब्दों—विशेष कर शास्त्र-विज्ञानों के पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया करते हैं, जिनके वास्तविक अर्थों, आशयों और विशेषताओं के विषय में उन्हें समुचित ज्ञान नहीं होता। इससे बहुत भ्रांति फैलती है। पारिभाषिक शब्दों एवं शास्त्रीय विषयों की व्याख्या करने वाले उपयुक्त साहित्य के अभाव में अज्ञानता का प्रसार होता है। राष्ट्रीय जागरण और नवचेतना के कारण जनता में राजनीति, अर्थशास्त्र आदि समाजशास्त्रीय एवं विविध विज्ञानों को जानकारी की प्रवृत्ति और अभिरुचि बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रभाषा हिंदी में लोकोपयोगी सरल, सुबोध एवं विवेचनात्मक साहित्य का अभाव बहुत अखरता है।

इसी कमी की पूर्ति के लिये सरल एवं सुबोध भाषा तथा सुगम शैली में लोकोपयोगी साहित्य-सर्जन का अनुष्ठान प्रस्तुत पुस्तिका से प्रारभ किया गया है।

पिछले डेढ़ दशकों से अधिनायक, डिक्टेटर, तानाशाह, अधिनायकतंत्र, अधिनायकी, डिक्टेटरशिप, तानाशाही आदि शब्दों का प्रयोग बहुत अधिक बढ़ गया है, किंतु इस विषय पर, जहाँ तक लेखक को ज्ञान है, पं० जवाहरलाल नेहरू लिखित 'विश्व इतिहास की झलक' और डा० खेर प्रणीत 'संसार को समाज क्रांति और भारत' में कुछ वाक्यों को छोड़ राष्ट्रभाषा हिंदी में कोई साहित्य नहीं। लेखक का कई साल पहले 'माधुरी' में 'अधिनायकतंत्र का स्वरूप' शीर्षक एक निबंध प्रकाशित हुआ था, जिसकी उपयोगिता समझ माधुरी-संपादक पं० रूपनारायणजी पाण्डेय ने अंतर्राष्ट्रीय विषयों पर उसी प्रकार के विवेचनात्मक निबंध लिखने के लिये लेखक से अनुरोध किया था।

प्रस्तुत पुस्तिका 'अधिनायकतंत्र का स्वरूप' शीर्षक निबंध का ही विस्तृत एवं परिष्कृत रूप है।

हिंदी में इस विषय का साहित्य न होने के कारण लेखक को अँगरेजी भाषा के साहित्य से अधिक सहायता लेनी पड़ी है; विषय की गंभीरता के कारण इस छोटी-सी पुस्तिका के लिये अनेक पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं का पारायण करना पड़ा है। यह किसी ग्रंथ विशेष का अनुवाद नहीं; इसका लेखन विषय के पर्याप्त परिशीलन के पश्चात् स्वतंत्र रूप से किया गया है। इस पुस्तिका के लिखने में जिन पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता ली गई है, उनके लेखकों और संपादकों का लेखक आभारी है। यदि इससे अपने प्रेमी पाठक-पाठिकाओं का कुछ भी मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन हुआ तो लेखक अपने श्रम को सफल समझेगा और समाजशास्त्र संबंधी अन्य विषयों पर भी लोकोपयोगी पुस्तकें जनता की सेवा में भेंट करने का प्रयत्न करेगा।

मित्रों एवं पाठक-पाठिकाओं के अत्यधिक आग्रह-अनुरोध के होने पर भी पुस्तिका के मुद्रण में बहुत अधिक विलंब हुआ है। इस देर का कारण सार्वजनिक कार्यव्यस्तता के अतिरिक्त प्रकाशन विषयक लेखक की स्वाभाविक शिथिलता और उदासीनता रही है। विधान निर्मात्री परिषद् की सदस्यता का लेखक पर उत्तरदायित्व आ जाने के कारण इस का प्रकाशन अशक्य ही था यदि उसके मित्रगण मुद्रण-भार अपने ऊपर न ले लेते। 'नवशक्ति' और 'राष्ट्रवाणी' के संपादक श्रीदेवव्रतजी शास्त्री ने पुस्तिका को सचित्र बनाने में ब्लाकों द्वारा जो सहायता की है, उसके लिये लेखक उनका कृतज्ञ है।

कल्प-कुटीर
सिरिहरा, चाँद
शाहाबाद (विहार)

विनीत
गुप्तनाथ सिंह

अधिनायकतंत्र

(डिक्टेटरशिप)

उपक्रम—

संसार की शासन-पद्धति में समय-समय पर परिवर्तन हुआ करते हैं। कभी एकतंत्र का प्रचलन रहता है, कभी कुलीनतंत्र का; किसी समय लोकतंत्र का ही प्राबल्य हो जाता है। फ्रांस की राज्यक्रांति के बाद से महासमर (१९१४-१८) के पहले तक लोकतंत्र का बोलबाला था। उन दिनों लोकतंत्र का इतना ज्यादा ज़ोर था कि संसार के अधिकांश देशों में इसकी स्थापना हो गई थी। जिन देशों में लोकतंत्र प्रत्यक्षतः नहीं स्थापित हुआ था, उनकी शासन-प्रणालियों पर भी इसका काफी असर पड़ा था। पूर्ण स्वेच्छाचारी राज्य तो इने-गिने ही रह गए थे। लोकतंत्र के प्रति सर्वसाधारण का अनुराग हद दर्जे को पहुँच गया था। यह शासन-प्रणाली इतनी लोकप्रिय हो गई थी कि लोग इसको ही सर्वश्रेष्ठ, लोकहितकारी एवं चिरस्थायी राज्य-प्रणाली समझने लगे थे। लोकतंत्र का कभी लोप होगा, इस पर शायद ही किसी को विश्वास हो सकता था। महासमर (१९१४-१८) के बाद लोक-भावना में प्रतिक्रिया प्रारंभ हुई। अधिकांश लोकतंत्रात्मक देशों में अधिनायकतंत्र (डिक्टेटरशिप) का नाम सुनाई पड़ने लगा। चिरस्थापित लोकतंत्रों के टूटने और अधिनायकतंत्रों के

नवस्थापन का कार्य एक साथ ही बड़ी शीघ्रता से होने लगा।

अधिनायकतंत्र को कोई स्वतंत्रता, शिक्षा-संस्कृति और शांति का शत्रु बताता है तो कोई सुधार, सुव्यवस्था और समृद्धि का साधन। जिस प्रकार एकतंत्र, कुलीनतंत्र, लोकतंत्र आदि अन्य राज्य-प्रणालियों के गुण-दोषों के विषय में राजनीतिज्ञों में मत-भेद पाया जाता है, उसी प्रकार अधिनायकतंत्र के बारे में भी। प्रत्येक वर्ग अपने मत के समर्थन तथा प्रतिपक्षी के खंडन में दलीलें पेश करता है। ऐसी स्थिति में किसी मत विशेष का पक्ष न ले विषय का निष्पक्ष निरूपण करना ही अधिक उपयुक्त होता है। अतः यहाँ उभय पक्ष की युक्तियों की समीक्षा के साथ अधिनायकतंत्र का विवेचन किया जायगा।

अँगरेजी भाषा के 'डिक्टेटरशिप' के लिये हिंदी में अधि-नायकतंत्र, अधिनायकशाही, अधिनायकी, अधिनायकवाद, सर्वाधिकार, सर्वाधिकारतंत्र, सर्वाधिकारवाद तथा तानाशाही शब्द प्रयुक्त होते हैं। डिक्टेटरशिप के प्रमुख अधिकारी को अँगरेजी में 'डिक्टेटर' कहते हैं, जिसके लिये हिंदी में अधि-नायक, सर्वाधिकारी, सर्वेसर्वा एवं तानाशाह शब्द प्रयुक्त होते हैं। यद्यपि सर्वाधिकारतंत्र या सर्वाधिकारवाद एवं सर्वाधिकारी शब्द क्रमशः 'डिक्टेटरशिप' और 'डिक्टेटर' के भावों को सरलता पूर्वक व्यक्त करते हैं, तथापि अधिनायकतंत्र या अधि-नायकवाद एवं अधिनायक शब्द ही अधिक प्रचलित हो गए हैं। तानाशाह और तानाशाही शब्द एक ऐतिहासिक स्वेच्छाचारी तथा उसकी राज्य-प्रणाली के लिये रूढ़ बन गए हैं। यहाँ अन्य शब्दों

का प्रयोग न कर केवल अधिनायक और अधिनायकतंत्र का ही प्रयोग किया जायगा।

अधिनायकतंत्र की प्राचीनता—

अधिनायकतंत्र का नाम यद्यपि महासमर (१९१४-१८) के बाद से ही अधिक सुनाई पड़ने लगा है, तथापि यह है बहुत पुरानी राज्य-प्रणाली। वैसे तो इसके अस्तित्व का प्राचीन साहित्यों में भी कई स्थानों पर संकेत पाया जाता है, परंतु उसकी व्यवस्थित विद्यमानता का स्पष्ट उल्लेख मिलता है प्राचीन रोम के इतिहास में। यह राज्य-प्रणाली रोम देश में ईस्वी सन् से प्राय: चार सौ वर्ष पहले प्रचलित थी। आरंभ में रोम के अधिनायक को 'मैजिस्टर पपुली' अर्थात् लोकशासक की उपाधि दी जाती थी। रोम में सर्व प्रथम ईस्वी पूर्व ३६७ में आंतरिक संकट के समय अधिनायक की नियुक्ति की गई थी। पुन: ईस्वी पूर्व ३१४ में युद्ध, विद्रोह या अन्य अपराधों के दूरीकरण के लिये जो अधिनायक नियुक्त किया गया, उसे 'ऐडमिनिस्ट्रेटिव डिक्टेटर' अर्थात् शासनाधिनायक की उपाधि दी गई।

रोमन अधिनायकतंत्र के उदय के कारण—

प्राचीन रोम का शासन-चक्र लोक-प्रतिनिधि संस्था द्वारा, जिसे 'सिनेट' कहते थे, चलता था। संपूर्ण शासन-सूत्र समान अधिकार वाले दो राष्ट्रनायकों द्वारा, जिन्हें 'कन्सल' कहते थे, संचालित होता था। इस से उनमें बहुधा मत-भेद हो जाया करता था; क्योंकि प्रत्येक अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करता था। संकट-काल में इस प्रकार के लोग कुछ भी कर सकने में

असमर्थ हो जाते थे। ऐसी स्थिति में एक ऐसे शक्तिशाली व्यक्ति की आवश्यकता पड़ती थी, जो असाधारण अधिकारों के साथ शासन-सूत्र को अपने हाथों में लेकर देश की रक्षा कर सके।

प्राचीन अधिनायकतंत्र का स्वरूप—

पुराने अधिनायकतंत्र का मुख्य उद्देश्य गृह-कलह अथवा विदेशी आक्रमण जन्य संकटों का दूरीकरण था। इसी उद्देश्य से प्राचीन रोम में किसी व्यक्ति विशेष को असाधारण अधिकार देकर अधिनायक (डिक्टेटर) नियुक्त किया जाता था। देश-रक्षा के निमित्त वह हिंसात्मक या अहिंसात्मक किसी भी मार्ग का अवलंबन कर सकता था। अपने कार्य-काल के भीतर वह पुराने विधान के अनुकूल चलने के लिये बाध्य नहीं होता था। देश को विपत्ति से बचाने के लिये वह सर्वथा नए नियम-क़ानून भी जारी कर सकता था। उसका कार्य-काल अधिक से अधिक छै मास का होता था। संकट-काल की समाप्ति तथा देश में शांति-सुव्यवस्था की स्थापना होते ही उसे अपना अधिनायकत्व छोड़ना पड़ता था और सारे अधिकार जनता को सौंप देने पड़ते थे। छै मास के पहले कार्य सिद्ध हो जाने पर भी अधि-नायक को अपना आसन छोड़ देना पड़ता था। छै मास से अधिक दिनों का संकट-काल होने पर अधिनायक की दुबारा नियुक्ति की जाती थी। कभी-कभी निर्वाचन, क्रीड़ा, उत्सव आदि गौण कार्यों के संचालन एवं नियंत्रण के निमित्त भी अधिनायकों की नियुक्ति की जाती थी। इस प्रकार पुराना अधिनायकतंत्र संकट-काल अथवा किसी कार्य विशेष के निमित्त

अल्प समय के ही लिये स्थापित किया जाता था। उसकी समाप्ति अथवा पूर्ति होते ही अधिनायकतंत्र का भी अंत कर दिया जाता था।

यह स्मरण रखना चाहिए कि पुराने अधिनायक अपने निजी बल पर शासन नहीं करते थे; उनकी शक्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष-रूप से जनता की इच्छा पर ही अवलंबित रहती थी। यद्यपि अधिनायक सिनेट (प्राचीन इटली की शासन समिति) के प्रति उत्तरदायी नहीं रहता था, तथापि उसकी प्रत्येक क्रिया के पीछे जनता की इच्छा काम करती थी। वह सिनेट की सम्मति बिना राजकोष से स्वेच्छानुसार धन व्यय नहीं कर सकता था। इससे स्पष्ट है कि संकट-काल में असाधारण अधिकारों से युक्त होने पर भी, आधुनिक अधिनायकों के समान, पुराने अधिनायक सर्वथा स्वतंत्र नहीं रहते थे।

पुरातन अधिनायकतंत्र का उच्छेद—

रोम देश में अधिनायकों की नियुक्ति का कई शताब्दियों तक प्रचार था। पीछे अधिनायकों में अत्याधिक स्वेच्छाचार की प्रवृत्ति देख कर इस पद्धति को ईस्वी पूर्व ४४ में उठा दिया गया।

अधिनायकतंत्र का पुनरुत्थान और उसके कारण—

अधिनायकतंत्र का आविर्भाव बहुत दिनों के बाद अब पुनः नवीन रूप में हुआ है। आधुनिक अधिनायकतंत्रों के उद्भव का मूल कारण पिछले महासमर से उत्पन्न संसार की विकट परिस्थिति है। आधुनिक अधिनायकतंत्रों की उत्पत्ति के कई

कारण हैं। एक ओर महासमर की मारसे जनता बेदम हो गई थी; उसमें अकर्मण्यता के भाव आ गए थे और दूसरी ओर लड़ाकू व्यक्तियों में सैनिक अनुशासन के भाव प्रबल थे। उनकी प्रत्येक गतिविधि से सैनिक अनुशासन के ही भाव टपकते थे। वे प्रत्येक समस्याको ठीक उसी ढंगसे सुलझाना चाहते थे, जिस ढंगसे युद्ध-काल में सुलझाई जाती थी। ये किसी कार्य की सिद्धि के लिये लोक-मत को स्वीकृति प्राप्त करने के झमेले में पड़ना अनावश्यक और अहितकर समझते थे। ऐसी स्थिति में अकर्मण्य जनता को क्रिया-शील बनाने तथा सैनिक अनुशासन के अभ्यस्त उद्धत वर्ग को नियंत्रण में रखने के लिये ऐसी राज्य-प्रणाली आवश्यक हुई, जिसमें एक शक्तिशाली व्यक्ति अथवा व्यक्तिसमूह शेष जनता का स्वेच्छापूर्वक नियमन कर सके। कृषकों की संतुष्टि के लिये भूमि का पुनर्विभाजन, युद्ध कालीन ऋणों को चुकाने के निमित्त कर-भार की समुचित व्यवस्था, सिक्कों की गिरावट, व्यापक बेकारी, अर्थ-संकट, व्यापारिक मंदी, देशों का नवीन सीमा-निर्धारण, जातीय भावना के नए रूपसे जाग्रत् होने आदि के कारण अधिकांश देशों में विशेष कर यूरोप में विकट समस्याएँ उत्पन्न हो गईं। उन्हें लोग शीघ्र से शीघ्र हल कर लेना चाहते थे। इसका होना लोकतंत्र में कठिन था। लोकतंत्र की शिथिल-ताएँ बाधक होती थीं। 'निदान कई समस्याओं ने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करदी, जिसमें क्रांति का होना अनिवार्य हो गया। बात यह थी कि बहुत दिनों तक लोकतंत्रात्मक अवस्था में रहते-रहते लोग ऊब-से गए थे। उन्हें अनुभव हो गया था कि विशेष काल

के संकटों का निवारण लोकतंत्रात्मक ढंग से नहीं हो सकता; यह दूसरी विधिसे ही संभव है। उनका कहना था कि आधुनिक प्रतिनिधि-पद्धति की प्रवृत्ति राष्ट्र का सच्चा प्रतिनिधित्व करने के बदले समाज के ख़ास लोगों के स्वार्थ-साधन में सहायक बनाने की ओर है। इसमें सार्वजनिक जीवन पंगु बन जाता है। लोक-भावना में इस प्रकार के परिवर्त्तन का परिणाम यह हुआ कि जनता अधिनायकतंत्र की ओर झुकने लगी। लोग ऐसे व्यक्तियों का आश्रय लेने लगे जो बहस-मुबाहिसे के झमेलों से अलग रह-कर राष्ट्रहित की बातों पर तत्काल निश्चित मत दे सकें।

अधिनायकतंत्र की परिभाषा—

आधुनिक अधिनायकतंत्रों के आविर्भाव के कारणों पर विचार करने पर यह सहज ही प्रश्न उठता है कि अधिनायकतंत्र कहते किसे हैं; उसका लक्षण क्या है? अन्य पारिभाषिक शब्दों की भाँति अधिनायकतंत्र की भी परिभाषा कठिन है। सबसे पहले यहाँ एक अधिनायक द्वारा दी गई परिभाषा पर ही विचार किया जाता है। रूस के प्रथम अधिनायक लेनिन के मतानुसार 'अधि-नायकतंत्र' (डिक्टेटरशिप) शासन का वह रूप है, जो सीधे सैन्य बल पर अवलंबित रहता है, जिसमें किसी क़ायदे-क़ानून की पाबंदी नहीं होती।"*

इस परिभाषा के अनुसार प्रत्येक स्वेच्छाचारी निरंकुश राज्य

---

* The dictatorship is a form of government based directly upon force which owes allegiace to no law.

को अधिनाकयतंत्र की संज्ञा दी जा सकती है; क्योंकि स्वेच्छचारी क़ायदे-क़ानून की परवा किए बिना सैन्य बल के सहारे मनमाने ढंग से शासन करता है। फिर भी मध्य अफ्रिका के हब्शी नरेश, फ़ारश के शाह आदि अधिनायक नहीं माने जाते। क्यों? इसका कारण है। इन स्वेच्छाचारी शासकों की शक्ति उनकी प्रजाओं की विचार-परंपरा में निहित रहती है, जो सदैव अपने शासक के सामने झुकतीं और सब कुछ सहन करती रहती हैं। वे यह समझती हैं कि स्वेच्छाचार करना राजा का दैवी अधिकार है और उसे चुप-चाप सहन करना प्रजा का धर्म! इस प्रकार के स्वेच्छाचारी शासन की स्थिति क़ानूनी होती है। शासन-सूत्र को या तो वह पैतृक अधिकार के आधार पर ग्रहण करता है अथवा पूर्व शासक की हत्या, सामरिक विजय आदि के उपलक्ष्य में परंपरानुसार अपनी जाति के मुखियों द्वारा चुने जाने के कारण।

अधिनायकतंत्र मध्यकालीन कुलीनतंत्र से भी भिन्न है। कुलीनतंत्र में राज्य के कुछ विशिष्ट वर्गों को ही नागरिक अधिकार प्राप्त होते थे। उनका राज्य से सीधा संबंध रहता था और वे अधिकार विरहित शेष जनता पर शासन करते थे। इसके विपरीत अधिनायकतंत्र में शासन-संचालन राज्य के एक अथवा एकाधिक नागरिकों द्वारा होता है, जो राज्य के उन नागरिकों पर शासन करते हैं, जिनके अधिकार क्रांति के फलस्वरूप छिन जाते हैं। इस प्रकार अधिनायकतंत्र स्वेच्छाचारी एकतंत्र एवं कुलीनतंत्र दोनों से ही भिन्न प्रकार की राज्य-प्रणाली है।

अधिनायकतंत्र की परिभाषा करने तथा उसका स्वरूप निश्चित

करने के लिये उसके मुख्य-मुख्य लक्षणों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

अधिनायकतंत्र का पहला लक्षण पुराने क़ायदे-क़ानूनों की उपेक्षा करना है। वह पुराने नियम-क़ानूनों को तोड़ कर ही अपना जीवन आरंभ करता है। इसकी स्थापना पुराने राजनियमों में महान् परिवर्तन के पश्चात् होती है। इसका अर्थ यह नहीं समझ लेना चाहिए कि अधिनायकतंत्र में कोई क़ायदा-क़ानून होता हो नहीं। नियम-क़ानून हाते हैं, किंतु अपने ढंग के सर्वथा नवीन। यह तंत्र पुराने नियमों की आधारशिला पर नहीं टिकता। आवश्यकतानुसार नित्य-नए नियम-क़ानून बनते और बिगड़ते रहते हैं।

अधिनायकतंत्र का दूसरा लक्षण उसमें लोकमत के अभाव का होना है। लोकतंत्र में राज्य के प्रत्येक नागरिक का शासन में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कुछ न कुछ हाथ ज़रूर रहता है। इसके विपरीत अधिनायकतंत्र में एक अधिनायक अथवा एकाधिक व्यक्तियों का अधिनायक-मंडल संपूर्ण जनता पर शासन करता है। जनता की सम्मति का कोई मूल्य नहीं होता। वस्तुतः सम्मति ही नहीं ली जाती। अधिनायक का आदेश ही क़ानून का काम देता है। क्रांति के पहले जिन लोगों के हाथों में शासनाधिकार रहता है, अधिनायकतंत्र की स्थापना के पश्चात् उनके अधिकार छिन जाते हैं। इस पराजित पक्ष पर विजयी वर्ग (अधिनायक-पक्ष) का शासन-चक्र चलता है।

अधिनायकतंत्र का तीसरा लक्षण अधिनायक का अपने

शासनाधिकार की स्पष्ट उद्घोषणा करना है। लोकतंत्र का कोई भी कर्मचारी, चाहे वह राष्ट्रपति ही क्यों न हो, स्पष्ट रूप से यह घोषित नहीं कर सकता कि मैं जनता का शासक हूँ और ऐसा ही करूँगा। वह जो कुछ करता है, लोकमत के नाम पर। इसके विपरीत अधिनायक अपने शासनाधिकार की सगर्व घोषणा कर सकता है। बहुधा अधिनायक यह कहा करते हैं कि हमें अमुक रीति से चलने का दैवी अधिकार है।

अधिनायकतंत्र का चौथा लक्षण क्रांति के पहले वाले शासनाधिकारियों को अधिकारच्युत करना तथा शासन-कार्यों में उनकी सम्मति न लेना है।

उपर्युक्त लक्षणों के आधार पर परिभाषा रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिनायकतंत्र शासन-प्रणाली का वह रूप है, जिसमें राज्य का एक व्यक्ति अथवा व्यक्तिसमूह पुराने क़ायदे-क़ानूनों को तोड़ कर सैन्य बल से ज़बरन् प्राप्त शक्ति के द्वारा संपूर्ण जनता पर शासन करता है, जिसमें क्रांति के पहले वाले शासनाधिकारियों की, जो क्रांति के पश्चात् अधिकारच्युत हो जाते हैं, शासन कार्य में सम्मति नहीं ली जाती

अधिनायक किसे कहते हैं ?—

यों तो अधिनायकतंत्र की परिभाषा से ही अधिनायक का भी लक्षण बहुत कुछ ज्ञात हो गया होगा; फिर भी उसकी स्वतंत्र परिभाषा कर लेने से भाव अधिक स्पष्ट हो जायगा। डिक्टेटर, अधिनायक, तानाशाह या सर्वाधिकारी उस व्यक्ति को कहते हैं, जिसे किसी चीज़ पर अनियंत्रित अधिकार हो। यह भाव

सर्वाधिकारी शब्द से और भी स्पष्ट हो जाता है। उसे किसी बात के विषय में पूर्ण अधिकार, सब कुछ कर सकने का अधिकार दे दिया जाता है।

प्राचीन और नवीन अधिनायकतंत्र में अंतर—

प्राचीन और नवीन अधिनायकतंत्र में बहुत अंतर है। पुराने अधिनायकतंत्र का उद्देश्य थोड़े समय के लिये एक विशेष व्यक्ति के हाथ में असाधारण अधिकार देकर विशेष कालिक संकट से देश की रक्षा करना तथा संकट-काल की समाप्ति पर जनता के विधान सम्मत अधिकारों को पूर्वावस्था में लाना था। इसके विपरीत आधुनिक अधिनायकतंत्र में एक निरंकुश नेता अथवा वर्ग विशेष के स्वार्थों के पीछे जनता के विधान सम्मत पूर्वाधिकारों को कुचला जाता है। आधुनिक अधिनायक की नियुक्ति परिमित अवधि के लिये नहीं होती, उसकी महत्वाकांक्षा जीवन भर अपने पद पर बने रहने की होती है। पूर्व स्थित विधानावस्था कब आवेगी, इसका कोई संकेत नहीं पाया जाता। वास्तव में आधुनिक अधिनायकतंत्र लोकशासन अथवा स्वशासन के आदर्शों से बहुत दूर जा पड़ा है।

अधिनायकतंत्र के भेद—

यों तो अधिनायकतंत्र धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि अनेक भेदोपभेदों में विभक्त किया जा सकता है, किंतु इसके मुख्य भेद तीन हैं—सैनिक, समाजवादी और फासिस्ट। इनमें पहला अर्थात् सैनिक अधिनायकतंत्र तो पुराना है, किंतु पिछले

दोनों—समाजवादी और फासिस्ट अधिनायकतंत्र वर्तमान युग का देन हैं; ये इतिहास में नवीन अध्याय हैं।

१—सैनिक अधिनायकतंत्र—

सैनिक अधिनायकतंत्र का प्राचीन समय में बहुत प्रचार था। यह ख़ास कर सामरिक संकटों को दूर करने के निमित्त स्थापित किया जाता था। इसका उद्देश्य सैनिक होता है। सैनिक अधिनायकतंत्र (मिलिटरी डिक्टेटरशिप) का अधिनायक अपनी सामरिक शूरता के कारण नियुक्त किया जाता है। वह बहुधा अपने निजी बल-पौरुष के आधार पर भी सैन्यशक्ति के सहारे राष्ट्र का अधिनायक बन बैठता है। पोलैंड में पिल्सुडस्की और टर्की में कमाल पाशा द्वारा सैनिक अधिनायकतंत्र की ही स्थापना हुई।

२—समाजवादी अधिनायकतंत्र—

समाजवाद की सफलता के लिये, समाजवादी शासन की स्थापना के निमित्त समाजवादी अधिनायकतंत्र (सोशलिस्ट या कम्युनिस्ट डिक्टेटरशिप) की स्थापना आवश्यक समझी जाती है। पूँजीवादी सत्ता के स्थान पर समाजवादी सत्ता स्थापित होने के पहले जो क्रांति होती है, उसमें तत्कालीन शासक वर्ग, जिसमें प्रायः सभी मध्यम श्रेणी के पूँजीजीवी (बोर्जुआ) होते हैं, अधिकारच्युत कर दिया जाता है और शासन-सत्ता श्रमजीवी वर्ग (प्रोलिटेरियट) के हाथ में आजाती है। इस प्रकार क्रांति के बाद संक्रमण-काल (ट्रांजीशन पिरियड) में शासन-सत्ता का केवल श्रमजीवियों के हाथ में आने को श्रमिक अधिनायकतंत्र "डिक्टेटरशिप आव दी प्रोलिटेरियट" या 'प्रोलिटेरियन डिक्टेटर-

शिप' कहते हैं। इस प्रकार का श्रमिक अधिनायकतंत्र समाजवादी सत्ता की स्थापना तक कायम रखा जाता है। समाजवादी लोकतंत्र में विश्वास करते हुए भी वर्तमान लोकतंत्र की निंदा करते हैं। उनका कहना है कि वर्तमान कालीन लोकतंत्र सच्चा नहीं, वह केवल लोकतंत्र का परदा है। सच बात तो यह है कि इसमें थोड़े से चुने हुए पूँजीपतियों का गुट सारी जनता पर शासन करता है। इसमें सर्वसाधारण का हित होने के बदले शोषण होता है; हर प्रकार से ग़रीबों का ही खून चूसा जाता है। सच्चा लोकतंत्र तभी कायम हो सकता है, जब शोषण का अंत हो जाय और समाज में केवल एक ही वर्ग रह जाय। इस प्रकार के समाजवादी शासन का विकास करने के लिये बीच का एक ऐसा समय आवश्यक होता है, जिसमें सारी सत्ता ग़रीबों (किसान-मज़दूरों) के हाथ में रहे और समस्त पूँजीवादी एवं धनिक वर्ग इस प्रकार दबा कर रखा जाय कि वह क्रांति के बाद नवस्थापित श्रमिक राज्य के विरुद्ध षडयंत्र न कर सके। संक्रमण काल में यदि श्रमिक अधिनायकतंत्र स्थापित करके धनिक वर्ग-को न दबाया जाय तो वह षडयंत्रों द्वारा नवस्थापित राज्य को नष्ट कर दे। इसीलिए कुछ काल तक, जब तक समाजवादी सत्ता पूर्ण रूपेण स्थापित न हो जाय, पूँजीपतियों को दबाए रखना आवश्यक होता है; उन्हें शासनाधिकार नहीं दिया जाता। कुछ दिनों के बाद जब देश में पूरी तरह से समाजवादी पद्धति स्थापित हो जाती है, तब पूँजीजीवी और श्रमजीवी—धनी-ग़रीब (बोर्जुआ और प्रालिटेरियट) का झगड़ा नहीं रह

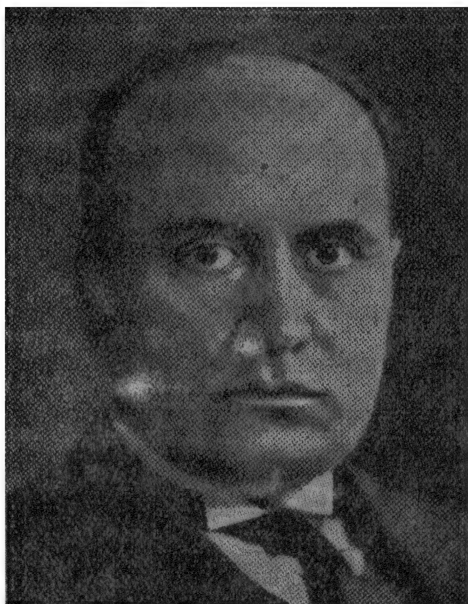
जाता ; केवल एक ही वर्ग रह जाता है। दूसरे शब्दों में समाज वर्ग-विहीन हो जाता है ! इस प्रकार के समाज का शासन पुनः सच्ची लोकतंत्र-प्रणाली के अनुसार चलने लगता है।

सोवियट रूस में क्रांति के पश्चात् समाजवादी दल द्वारा इसी प्रकार का श्रमिक अधिनायकतंत्र स्थापित किया गया है। इस में सारे किसान-मज़दूरों का प्रतिनिधित्व है। ९० या ९५ फी सदी की १० या ५ लोगों पर हुकूमत होती है। विचारों और समाचारपत्रों की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध और कड़ाई रखी जाती है। इस बात की सभी स्वतंत्रता प्रेमी टीका करते हैं। समाजवादी इसका यही उत्तर देते हैं कि कुछ काल के लिये ऐसी कड़ाई आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। सोवियट रूस में कोई व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये दूसरों का शोषण नहीं करता ; कोई शोषक वर्ग ही नहीं रह गया है। यदि कोई शोषण होता है तो राज्य द्वारा, जो लोक-हितार्थ—सब की भलाई के निमित्त होता है। समाजवादी अधिनायकतंत्र का ध्येय सार्वदेशिक है—अंतर्राष्ट्रीयता मूलक।

३. फासिस्ट अधिनायकतंत्र—

फासिस्ट अधिनायकतंत्र समाजवादी अधिनायकतंत्र से सर्वथा भिन्न है। समाजवादी लोकतंत्र में विश्वास रखते हैं, किंतु फासिस्ट लोकतंत्र के कट्टर विरोधी हैं। वे लोक-सत्ता के सिद्धांत एवं विचारों के ही विरुद्ध हैं। वे सारी शक्ति लगा कर इसकी निंदा करते हैं। इटली के फासिस्ट अधिनायक मुसोलिनी ने लोकतंत्र को "सड़ी हुई लाश" की पदवी दी थी। फासिस्ट

अधिनायकतंत्र में व्यक्ति कुछ नहीं ; सब कुछ राज्य माना जाता है। फासिस्ट अधिनायकतंत्र पूँजीवाद का पोषण करता है। यह एक प्रकार का पूँजवादी अधिनायकतंत्र (कैपिटलिस्ट डिक्टेटरशिप) ही है। इसमें सर्वसाधारण का बड़ी क्रूरता से दमन किया जाता है।



फासिस्ट अधिनायक मुसोलिनी

इटली का फासिस्टवाद (फासिज्म) और जर्मनी का नाज़ीवाद (नाज़िज्म) दोनों फासिस्ट अधिनायकतंत्र के ही रूप हैं ; केवल नाम में अंतर है। फासिस्ट अधिनायकतंत्र का ध्येय एक देशी है—साम्राज्यवाद मूलक। फासिस्ट अधिनायतंत्र की प्रवृत्ति

समस्त भूमण्डल में साम्राज्य स्थापित करने की ओर है।

अधिनायकतंत्र का विकास-क्रम—

अधिनायकतंत्र के निर्माण में तीन प्रधान विकास-क्रम पाए जाते हैं—शक्ति-संचय के लिये तैयारी, शक्ति का प्रयोग और शक्ति का संरक्षण। सर्व प्रथम अदम्य उत्साह के सथ विचार-क्षेत्र तैयार किया जाता है। लोकमत को अपने पक्ष में लाने के लिये आदर्शात्मक विचार-धारा का प्रचार, विशिष्ट नेता का निर्वाचन, संघटन एवं कार्य-विधि का निर्धारण आदि आवश्यक होते हैं। सर्वसाधारण को अपनी ओर आकृष्ट करने के उद्देश्य से अन्य दलों की कड़ी आलोचनाएँ की जाती हैं और देश की दुर्गति, अवनति एवं गिरावट का उन्हें ही जिम्मेदार सिद्ध करने की चेष्टा की जाती है। इस प्रकार जन वर्ग में पूर्व-शासकों के प्रति घृणा के भाव भरे जाते हैं। इसके बाद जनता में देश-भक्ति की भावना भरने और देश के पूर्व गौरव की प्राप्ति के निमित्त उसे लड़ने के लिये उभाड़ा जाता है। सिनेमा, चित्र, विज्ञापन, वक्तृता, सैनिक प्रदर्शन आदि विविध साधनों के सहारे प्रचार कराया जाता है। इसके लिये जनता में आतंक भी फैलाया जाता है। इस प्रकार शक्ति संचित कर लेने पर शासन-सूत्र को अपने हाथ में लेने की क्रियात्मक चेष्टा की जाती है; चुनाव आदि में भाग लेकर प्रत्येक शासन-विभाग में अपने प्रतिनिधि भेजने का प्रयत्न किया जाता है। जब देश में अधिनायक वर्ग की पूरी धाक जम जाती है, तब सभी सरकारी मोहकमों को अपने दल के आदमियों से पाटने की कोशिश की

जाती है। इस प्रकार अधिनायक अपनी शक्ति को चारों ओर से सुरक्षित करके अपने आदर्शों के अनुसार देश की उन्नति के लिये नियम बनाने और उन्हें क्रियात्मक रूप देने में समर्थ सिद्ध होता है। अधिनायक वर्ग सांप्रदायिक कट्टरता एवं धर्मांधता के साथ अपने पक्ष की रक्षा में सदैव तत्पर रहता है। लोगों से देश-भक्ति, सदाचार एवं आदेश-पालन की प्रतिज्ञाएँ कराई जाती हैं। कई अधिनायकतंत्रों में अनुशासन संबंधी नियमों का बड़ी कठोरता से पालन कराया जाता है।

अधिनायकतंत्र का मुख्य उद्देश्य नवीन एवं व्यवस्थित वातावरण उत्पन्न करना होता है। इसका जन्म यद्यपि क्रांति की धाँधली में ही होता है, तथापि कुछ दिनों के बाद अपनी स्थिरता एवं टिकाव के लिये अधिनायक गण विविध उपायों का, जिनमें पशुबल प्रधान होता है, सहारा लेते हैं। सच तो यह है कि सभी क्रांतियाँ और अधिनायकतंत्र लूटखसोट एवं अराजकता के पश्चात् शांतिमय स्वर्ण युग का आरंभ करने के उद्देश्य से अंत काल तक मारकाट और ज़बर्दस्ती का प्रयोग करते रहते हैं। इस अर्थ में शक्तिशाली अधिनायक, चाहे वह इटली का मुसोलिनी हो, चाहे रूस का स्टालिन, चाहे जर्मनी का हिटलर हो, चाहे टर्की का कमालपाशा—सभी समान हैं। प्रत्येक अपने विरोधी वर्ग का अंत करके ही शांत होना चाहता है। रूस का श्रमिक अधिनायकतंत्र समाजगत वर्ग-विभेद को दूर कर देना चाहता है, हिटलर जर्मनी को नाज़ीदल का ही

निवास-स्थान बनाना चाहता था और मुसोलिनी इटली को फासिस्टों का क्रीड़ा-स्थल।

अधिनायकतंत्र और सैन्य शक्ति—

अधिनायकतंत्र का मूलाधार सैन्यबल है। अधिनायक के पास सदा पशुबल का होना आवश्यक होता है। सेना के विरोधी होने से वह अपना शासन-चक्र पल भर भी सुचारु रूप से नहीं चला सकता। हिटलर और मुसोलिनी को सेना का प्रबल सहारा था; कमालपाशा सैन्यबल पर ही रूढ़िवादी तुर्कों में नवीन सुधार का बिगुल फूँक सका था। अधिनायक सेना को वश में कर उससे मनमाना काम लेना अच्छी तरह से जानते हैं।

अधिनायक का उदय—

जब किसी देश में वहाँ के शासकों की आंतरिक निर्बलता के कारण विदेशी आक्रमण होने की संभावना हो जाती है या गृह-कलह, अराजकता आदि क्षोभजनक अवस्थाएँ उत्पन्न हो जाती हैं तो एक ऐसे व्यक्ति अथवा वर्ग की आवश्यकता होती है, जो विक्षुब्ध जनता को सैन्यबल के सहारे अनुशासन में ला सके। ऐसे संकट-काल में प्रबल व्यक्तित्ववाला कोई पुरुष उठ खड़ा होता है, जिसको जनता सहायता देने लगती है और वह पहले के शासक वर्ग को बल पूर्वक दबा कर शासन-सूत्र को अपने हाथ में ले लेता है। अधिनायकों के उदय के लिये युद्ध-काल को स्वर्ण-सुयोग समझना चाहिए; क्योंकि आगे बढ़ने के लिये उन्हें उसी समय सबसे अधिक सुभीता मिलता है। वे कभी किसी कुलीन राजा को साथ लेकर काम शुरू करते हैं; कभी अकेले। कुलीन शासक केवल कठपुतली भर

होता है; वास्तविक अधिकार होता है अधिनायक के हाथ में। उसका प्रभाव इतना अधिक बढ़ जाता है कि जनता उसका अंधानुकरण करने लग जाती है; लोग उसे त्राता, देवदूत और पैग़ंबर के समान समझने लगते हैं।

अधिनायक के अनुकूल सुयोग—

अधिनायकों के उदय में अनुकूल परिस्थितियों तथा सहायक सुयोगों का बहुत बड़ा हाथ रहता है। अनुकूल परिस्थिति से मनुष्य थोड़े ही प्रयत्न से बहुत ऊपर उठ जाता है। चाहे कोई स्वभावतः कितना ही योग्य क्यों न हो, अनुकूल परिस्थिति और सहायक सुयोग के मिले बिना उसका आगे बढ़ना बहुत कठिन होता है। अधिकांश व्यक्तियों को जन्म से ही अनुकूल परिस्थिति प्राप्त होती है; वे राजकुल में जन्म पाने के कारण आसानी से अधिनायक बन जा सकते हैं। फ्रांस का चौदहवाँ लुई इसका अच्छा उदाहरण है। कुछ लोगों को युद्ध-काल में सेनानायक के रूप में सफलता मिल जाती है और अंत में वे अपनी तेजस्विता के कारण उसी सैन्यशक्ति के सहारे राष्ट्र के अधिनायक बन बैठते हैं। संपूर्ण राष्ट्र उनके पीछे हो लेता है; उन पर ही सब कुछ निछावर कर देता है। इस प्रकार के पुराने अधिनायकों में सीज़र, नेपोलियन आदि तथा आधुनिक अधिनायकों में पिल्सुडस्की और मुस्तफा कमालपाशा हुए हैं। कुछ अधिनायक ऐसे भी होते हैं, जो ठीक समय पर जनता की आकांक्षाओं और विश्वासों को परख कर उनके प्रसारक बन जाते हैं। ऐसे लोग राजनीतिक क्रांतिकारी होते हैं, जो देश की विपन्नावस्था में जनता का नेतृत्व ग्रहण कर

आगे बढ़ते हैं, जब कि तत्कालीन शासक वर्ग पतनावस्था को पहुँच चुका होता है। रूस में जारशाही के विनाश के पश्चात् लेनिन ऐसा ही अधिनायक हुआ। क्रॉमवेल भी पवित्रतावादियों (प्यूरिटन्स) को संतुष्ट करने के ही कारण इंगलैंड का अधिनायक बना था। इस प्रकार के अधिनायकों में समय एवं परिस्थिति को परखने की पूरी योग्यता होती है। आधुनिक अधिनायकों में मुसोलिनी और हिटलर ने लोक-भावना को परखने में कमाल कर दिखाया।

अधिनायक के गुण—

अधिनायक का सर्वप्रथम गुण उसमें प्रबल इच्छाशक्ति का होना है। अगाध ज्ञान रहते हुए भी निर्बल इच्छाशक्ति का मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। दृढ़ इच्छाशक्ति के सहारे ही वह जनता को अपने पीछे लगा लेता है। पहले यह कौन कह सकता था कि टर्की से इस्लाम की रूढ़ियों की जड़ कभी उखड़ सकेगी; मुल्लाओं को अपनी कट्टरता छोड़नी पड़ेगी; स्त्रियों को बुर्केसे बाहर निकल कर स्वच्छंद वायु में विचरण करने का सुअवसर मिल सकेगा और वहाँ अरबी लिपि के बदले रोमन लिपि का व्यवहार हो सकेगा। यदि कुछ दिन पहले कोई इन सुधारों और परिवर्तनों की भविष्यवाणी करता तो लोग उसे झट सनकी करार देते। मुस्तफा कमालपाशा ने यह सब कर दिखलाया—केवल अपनी प्रबल एवं अडिग इच्छाशक्ति के सहारे। जनता जान गई कि उसके आदेश की अवहेलना करने में कल्याण नहीं।

दृढ़ इच्छाशक्ति के बाद दूसरा महत्वपूर्ण गुण अधिनायक में

प्रखर बुद्धि का होना है। उसकी बुद्धि गंभीर से गंभीर समस्याओं को सरलता से सुलझा सकनेवाली होनी चाहिए। समस्याओं का सूक्ष्म विश्लेषण और विवेचन करने से बहुसंख्यक विघ्नों की सेना खड़ी हो जा सकती है। वह स्वयं किसी विषय का विशेषज्ञ न होते हुए भी सभी कामों को अपने सहयोगी विशेषज्ञों की सहायता से कराया करता है। हाँ उसे सहकारी चुनने में सावधानी से काम लेना पड़ता है। विश्वासपात्र सहयोगियों के बिना चलना कठिन हो जाता है। अधिनायक के लिये विशेषज्ञता या पांडित्य की तो आवश्यकता नहीं होती, किंतु प्रत्येक बात को समझने की सामान्य योग्यता अवश्य होनी चाहिए।

इन गुणों के सिवा अधिनायक में क्रियाशीलता का होना अनिवार्य होता है। अकर्मण्य अथवा दीर्घसूत्री व्यक्ति अन्य गुणों के होते हुए भी सफल नहीं हो सकता। अधिनायक में अपने निश्चयों को तत्काल कार्यरूप में परिणत करने का गुण आवश्यक है। इसमें महत्वाकांक्षा कूट-कूट कर भरी रहती है और शक्ति-संचय का लोभ समाया रहता है नस-नस में। आशुतोष होना, शीघ्र ही संतुष्ट हो जाने की वृत्ति उसके लिये विघातक होती है। वह शांतिप्रिय नहीं होता। समरप्रेमी और आंदोलनकारी होने से ही वह अपने उद्देश्यों की पूर्ति में समर्थ होता है। उसे अपनी महत्वाकाक्षांओं की पूर्ति के लिये अपने क्षुद्र व्यक्तित्व को भूल जाना पड़ता है।

अधिनायकों का उद्‌भव-स्रोत—

अधिनायकों के संबंध में एक बात बड़े मार्के की यह है कि

पूँजीजीवी (बोर्जुआ) वर्ग ने आज तक एक भी अधिनायक उत्पन्न नहीं किया। लोकतंत्र के संचालकों में व्यापारी, विद्वान् और बड़े-बड़े भूमिपति या ज़मींदार हो गए हैं, किंतु अधिनायक बहुधा किसान, मज़दूर, सैनिक, समाजवादी अथवा कुलीन वर्ग में ही उत्पन्न हुए हैं। प्राचीन रोम का प्रथम अधिनायक सिनसिनेटस हल चलाने वाला ग़रीब किसान था। मुसोलिनी निर्धन लुहार का लड़का था और हिटलर पीठ पर कपड़ों की गठरी लेकर गली-गली फेरी करने वाले का बेटा, जो आरंभ में भूख से पीड़ित होकर अपना पैतृक धंधा करता था और ईंटें पाथा करता था। कमाल पाशा भी एक धनहीन का ही पुत्र था, जो बाल्यावस्था में खेतों पर बैठ कर चिड़िया हाँका करता था! लेनिन, मुसोलिनी, पिल्सुडस्की, हिटलर आदि सामाजवादी दलके सदस्य थे, स्टालिन भी समाजवादी दलका ही सदस्य है। इनमें दो-एक पुराने कुलीन परिवारों में उत्पन्न हुए हैं और शेष ने सैनिक रूप से अपने अपूर्व त्याग और साहस का परिचय दिया है।

अधिनायकों का व्यक्तिगत जीवन—

साधारणतया लोग अधिनायक शब्द से दृढ़ता, दबाव, कठोरता, क्रूरता, नृशंता और हृदयहीनता आदि का भाव लेते हैं। इसलिए यह सोचना स्वाभाविक ही है कि अधिनायकों का व्यक्तिगत जीवन भी उसी प्रकार का होगा। यह सही है कि सार्वजनिक जीवन में अधिनायकों को कठोर बनना पड़ता है, किंतु अधिकांश अधिनायकों के आंतरिक जीवन का अध्ययन करने से पता चलता कि अपने व्यक्तिगत जीवन में वे भी सामान्य जनों की भाँति ही आचरण करते

हैं ; उनके हृदय में भी करुणा, ममता, प्रेम और वात्सल्य के भाव भरे रहते हैं। यह मार्के की बात है कि अधिकांश अधिनायक आचरण के बड़े पक्के होते हैं। लेनिन, मुसोलिनी, हिटलर, पिल्सु डस्को, और स्टालिन आदि के विषय में अल्पाधिक रूप में यही बात लागू होती है। लेनिन आजन्म अपने संगी-साथियों के प्रति अपना प्रेम निभाता रहा। मुसोलिनी ने एक बार अपने पास के सारे पैसे पीड़ितों को बाँट दिए थे। हिटलर का आहार-विहार सात्विक जीवी पुरुष जैसा था। उसे शराब, मांस और धूम्रपान से बहुत घृणा थी। उसने सुदीर्घ काल तक ब्रह्मचारी का जीवन बिताया।

अधिनायकतंत्र; दैवी या दानवी ?

अधिनायकतंत्र को न एकदम दैवी ही कहा जा सकता है और न दानवी ही। यह कुछ अंशों में अपने दिव्य गुणों के कारण दैवी कहा जा सकता है और कुछ अंशों में अपने दोषों के कारण दानवी। अधिनायकतंत्र को उसकी सफलताओं के कारण दैवी कहा जा सकता है और अमानवी क्रूरताओं और बर्बरताओं के कारण दानवी।

अधिनायकतंत्र की सफलता—

अधिनायकतंत्र ने सैन्य शक्ति को सुदृढ़ बनाने में बड़ी भारी सफलता प्राप्त की है। रूस, इटली, पोलैंड, टर्की, जर्मनी आदि देशों ने अपना सैन्य बल इसीके सहारे सुदृढ़ बनाया। इसी सैन्य बल के आधार पर अधिनायकतंत्रात्मक देश विरोधियों को प्रकंपित करते रहते हैं। हिटलर ने इसी के बल पर अन्य देशों को युद्ध-दंड चुकाने से इन्कार कर दिया था; इटली ने अबीसीनिया को ज़बर्दस्ती धर दबाया और दूसरे राष्ट्र टुकुर-टुकुर ताकते ही रह गए। पिल्सुडस्की ने पोलैंड की

जराजीर्ण सेना को सबल बना कर उसीके सहारे १९२० ई० में विजय प्राप्त की और पड़ोस के भयंकर विरोधियों से देश की रक्षा करने में वह समर्थ हो सका। अदम्य सैन्य शक्ति के आधार पर ही स्टालिन क्रूर जर्मनों से अपने देश की रक्षा करने तथा उन्हें जड़-मूल से नष्ट करने में सफल हो सका है। इसी प्रकार अन्य अधिनायकों ने भी अपनी सेनाओं के सुदृढ़ संघटन में सफलता प्राप्त की है। सैनिक क्रूरताओं के संबंध में अधिनायकतंत्रवादियों का कहना है कि कोई भी शासन-प्रणाली बल-प्रयोग से ही चलाई जा सकती है। लोकतंत्र भी दूसरों पर तलवार के बल पर ही शासन करता है।

अधिनायकतंत्र की दूसरी सफलता देश-सेवा के लिये युवकों में अदम्य उत्साह एवं भावना भरने में है। इस विषय में अधिनायकतंत्रात्मक देशों ने आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है। देशवासियों में अनुशासन का भाव आ जाने के कारण शासन-कार्य को सुचारु रूप से चलाने में बड़ी सहायता मिलती है। जनता में क्रियाशीलता, नियम की पाबंदी और स्वच्छता के भावों का उदय हो जाता है। अधिनायकतंत्र को शासन एवं समाज संबंधी सुधारों में बहुत बड़ी सफलता मिली है।

अधिनायकतंत्र प्रणाली को आर्थिक विषय में भी काफ़ी सफलता मिली है। जिन देशों में अधिनायकतत्र की स्थापना हुई है, उनकी आर्थिक अवस्था में पर्याप्त सुधार हुआ है। महासमर (१९१४-१८) के बाद अधिनायकतंत्रात्मक देशोंने अपने सिक्कों की दर स्थिर करने, उद्योगधंधों और वाणिज्य-व्यवसायको उन्नत बनाने का सफल प्रयोग किया। वस्तुओं

के निर्माण और निर्यात में भी काफ़ी बढ़ती हुई। बेकारी बहुत कुछ दूर हो गई और लोगों के रहन-सहन का दर्जा काफ़ी उँचा हो गया।

अधिनायकतंत्र और विद्या-विज्ञान—

साहित्य, कला और विज्ञान की उन्नति किसी राष्ट्र की उन्नति की पहचान है। इसके संबंध में अधिनायकतंत्र की दुधारी नीति है। जहाँ तक इनसे उनके सिद्धांतों को कोई क्षति नहीं पहुँचती, वहाँ तक तो इनकी उन्नति को रोका नहीं जाता। इसके विपरीत जब ये राज्य-शासन के लिये घातक प्रतीत होने लगते हैं तो राज्य इन्हें नष्ट कर देता है। रूस में आर्थिक इतिहास, समाजवादी-साहित्य, शारीरशास्त्र, सिनेमा, थियेटर' साहित्य-समालोचन आदि, जिनके द्वारा बोलशेविज्म का प्रचार होता है, बहुत उन्नत हो गए हैं। इसके विपरीत जनता को निर्जीव बनाने वाले मरियल साहित्य एवं कला को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया जाता; उन्हें कुचल दिया जाता है। इटली और जर्मनीमें भी यही बात हुई। फासिस्टवाद और नाज़ीवाद के विरूद्ध लिखने वालों को कठोर दंड दिया जाता था। अन्य अधिनायकतंत्रों का भी प्रायः यही हाल है। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अधिनायकतंत्र विविध विद्याओं और कला-विज्ञानों के स्वतंत्र विकास के अनुकूल नहीं। विश्वविख्यात वैज्ञानिक आइन्स्टीन के शब्दों में "अधिनायकतंत्र (डिक्टेटरशिप) का अर्थ चारों ओर से ज़बानबंदी है और इसका परिणाम है अज्ञानताका प्रसार। विज्ञान

केवल भाषण-स्वातंत्र्य के वातावरण में ही पनप सकता है।*

अधिनायकतंत्र और व्यक्तिगत स्वतंत्रता—

अबतक अधिनायकतंत्र की सफलताओं पर राज पक्ष की दृष्टि से विचार किया गया है। यहाँ यह जानना भी आवश्यक है कि अधिनायकतंत्र वैयक्तिक विचार से कैसा है? अधिनायकों की काली करतूतों को देखते हुए यह कहना अयुक्त न होगा कि यह तंत्र नागरिकों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और हित के लिये भयानक सिद्ध हुआ है। व्यक्तियों पर जो ज़बरदस्ती दबाव डाला जाता है, उससे उनकी विचार-स्वतंत्रता नष्ट हो जाती है। उन्हें कैदी की भाँति चलना पड़ता है। आलोचना करने का कोई अधिकार नहीं रहता। किसीने वैसा किया नहीं कि गोलियों का शिकार हुआ नहीं। प्रायः सभी अधिनायकतंत्रात्मक देशोंमें स्वतंत्र विचारकों के साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया गया है। संसार की महान् विभूतियों तक को कारागार और निर्वासन का दंड भुगतना पड़ा है। सदा उनकी जानके लाले पड़े रहते हैं। रूस के महान् क्रांतिकारी ट्राटस्की को, जिसका सोवियट रूस के निर्माण में काफ़ी हाथ रहा, सैद्धांतिक मतभेदों के कारण विदेशों में दर-दर भटकना पड़ा और अंत में उसे अपने प्राण भी गँवाने पड़े। उसकी हत्या बड़ी निर्दयता के साथ की गई! अधिनायकों की मनमानी

---

* A dictatorship means muzzle all round, and consequently stultification, science can flourish only in an atmosphere of free speech.

आज्ञाएँ कभी-कभी मूर्खता और बर्बरता की पराकाष्ठाको पहुँच जाती है। विश्वविख्यात वैज्ञानिक आइन्स्टीन को जन्म से यहूदी होने के कारण देश-निकाला हुआ।

विचार-स्वातंत्र्य पर इस प्रकार के प्रतिबंधों के कारण मनुष्य की विवेचनाशक्ति दब जाती है। उसे अपना सत्य स्वरूप छिपाना और भयवश बनावटी रूप धारण करना पड़ता है। इस प्रकार अधिनायकतंत्र की वर्तमान प्रगति मानवता के लिये विघातक सिद्ध होती है। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि जिस स्वतंत्र वातावरण में पलकर अधिनायक पद पर लोग आसीन होते हैं, उसको ही वे दबाते हैं। यदि पहले के समाज में वर्तमान अधिनायकों को स्वतंत्रता न मिली होती तो वे शायद ही उस पद पर पहुँच पाते। आचार-विचार की आज़ादी छीनने से भावी नागरिकों की बुद्धि कुंठित हो जाती है और वे शासन-सूत्र को सँभालने में असमर्थ-से हो जाते हैं।

अधिनायकतंत्र और स्त्रियाँ—

स्त्रियों के संबंध में विभिन्न अधिनायकतंत्रों की अलग-अलग नीति होती है। समाजवादी अधिनायकतंत्र तो स्त्री-पुरुष दोनों को समान मानते हैं और उभय वर्ग की उन्नति के लिये पूर्ण प्रयत्न करते हैं। रूसी अधिनायकतंत्र ने स्त्रियों को बहुत ऊँचा उठा दिया है। इसने स्त्रियों को पुरुषों के ही समान उच्च पद निःसंकोच प्रदान किए हैं। इसी प्रकार टर्की के सैनिक अधिनायकतंत्र ने भी स्त्रियों को बहुत ऊँचा उठा दिया है। इसके विपरीत इटली और जर्मनी के अधिनायकतंत्रों ने स्त्रियों की स्वाधीनता को छीन कर

उन्हें बच्चे पैदा करने की मशीन मात्र बना छोड़ा। उनके सिद्धांतानुसार स्त्रियों का क्षेत्र गृह-प्रबंध और शिशुपालन है। फासिस्ट अधिनायकतंत्र स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखता है और उन्हें बंधन में रखता है।

अधिनायकतंत्र और साम्राज्यवाद—

अधिनायकतंत्र और साम्राज्यवाद में घनिष्ठ संबंध है। समाजवादी अधिनायकतंत्र को छोड़ सैनिक और फासिस्ट दोनों प्रकार के अधिनायकतंत्रों की प्रवृत्ति साम्राज्यवाद की ओर है। समाजवादी अधिनायकतंत्र सिद्धांततः साम्राज्यवाद का विरोधी है। इसके विपरीत सैनिक और फासिस्ट अधिनायकतंत्र साम्राज्यवाद का खुल्लमखुल्ला प्रचार करते हैं और उसे स्थापित करने का पूर्ण प्रयत्न करते हैं।

अधिनायकों का मात्स्य न्याय—

व्यक्ति-स्वातंत्र्य के साथ तो अधिनायक कड़ाई करते ही हैं; वे आपस में एक दूसरे को दबाने की भी सदा कोशिश करते रहते हैं। अधिनायक मात्स्य न्याय का अवलंबन करते हैं। जिस प्रकार बड़ी और सबल मछलियाँ छोटी और निर्बल मछलियों को मार खाने की चेष्टा करती हैं, उसी प्रकार सबल अधिनायक भी निर्बल अधिनायकों को विनष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। अधिनायक अपनी पारस्परिक शत्रुता का कारण सिद्धांत-भेद बताते हैं; किंतु असल बात है साम्राज्य-लिप्सा—सबको हड़प कर स्वयं सर्वशक्तिमान् बनने का लोभ। आस्ट्रिया आदि के अधिनायकतंत्रों को जर्मन अधिनायकतंत्र निगल गया और पोलैंड के अधिनायकतंत्र

को नष्ट किया जर्मन और रूसो दोनों अधिनायकतंत्रों ने मिलकर। इसी प्रकार जर्मनी के नाज़ी अधिनायकतंत्र को रूसी समाजवादी अधिनायकतंत्र ने हाल ही में स्वाहा किया है। प्रत्येक अधिनायक दूसरे को धर दबाने की ताक में रहता है।



नाज़ी अधिनायक हिटलर

समाजवादी और फासिस्ट अधिनायकतंत्रों में वैर—

यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि समाजवादी और फासिस्ट दोनों अधिनायकतंत्रों में सिद्धांत-भेद के कारण सदा भैंसे-की लाग रहती है। प्रत्येक दूसरे को दबाने की चेष्टा में रहता है।

कारण, एक का अस्तित्व दूसरे के लिये विघातक है। रूस पर जर्मनी के आक्रमण और घनघोर युद्ध का यही कारण था।

लोकतंत्र या अधिनायकतंत्र ?

लोकतंत्र या अधिनायकतंत्र दोनों राज्य-प्रणालियों के मूल में समाज संबंधी दो भिन्न कल्पनाएँ हैं। लोकतंत्र का आधारभूत सिद्धांत यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का स्वतंत्र अस्तित्व है, स्वतंत्र मत है और अपना अलग सामाजिक स्वार्थ भी है। इस प्रकार एक मत के अनेक व्यक्ति यदि राज्य-शासन करें तो अधिक से अधिक व्यक्तियों को लाभ पहुँच सकता है। अधिनायकतंत्र इससे भिन्न सिद्धांत पर स्थित है। अधिनातकतंत्रवादियों के मतानुसार समाज एक है; व्यक्तियों को स्वतंत्र मताधिकार नहीं है। अतः समाज से भिन्न उनका कोई स्वार्थ भी नहीं हो सकता; समाज का लाभ ही व्यक्तियों का लाभ है। समाज और व्यक्ति के स्वार्थ में कोई विरोध नहीं है। इस मत को मानने वाले अपना मत राष्ट्र के किसी अलौकिक पुरुष—अधिनायक के मुँह से प्रकट करते हैं। उनमें मतभेद या दलबंदी का झगड़ा नहीं होता। नाज़ी जर्मनी में निर्वाचन काल में जब मत माँगा जाता था तब सब ओर विज्ञापनों द्वारा यह घोषित किया जाता था कि एक ही जनता है; इसलिए एक मत होकर अनुकूल मत (वोट) दीजिए !

अधिनायकतंत्र के शासन में कुछ हालतों में राष्ट्र की विजयिनी शक्ति को बहुत उत्तेजन मिलता है। वह केंद्रित होकर राष्ट्र को अभ्युदय की ओर बढ़ाती है। ऐसी स्थिति में अधिनायक-तंत्र उस क्षीण लोकतंत्र की अपेक्षा, जिसमें विभिन्न राजनीतिक दलों

के विद्वेषों का सागर लहराया करता है, अच्छा ही कहा जायगा। फिर भी प्रश्न यह होता है कि अधिनायकतंत्र की अवस्था में जनता को आखिर मिलता क्या है? अपहरण, दमन, निर्वासन, नृशंस हत्या आदि। यहीं पर लोकतंत्र अधिनायकतंत्र से श्रेष्ठता की पदवी धारण कर लेता है। लोकतंत्र में संपूर्ण राष्ट्र की सम्मति निहित रहती है; प्रत्येक नागरिक राष्ट्र-सेवा में उचित भाग का अधिकारी रहता है। लोकतंत्र के विरोधियों को भी नागरिकता के अधिकार से वंचित नहीं किया जाता। स्वतंत्र आलोचना द्वारा शासन-सुधार में सहायता मिलती रहती है। अधिनायकतंत्र आदेश-पालन चाहता है और लोकतंत्र बनाता है लोगों को सुशिक्षित। पहला बर्बरता का प्रतीक प्रतीत होता है और दूसरा बंधुत्व का बोधक। पहले में मनुष्य अपनी स्वतंत्र सम्मति को दबाते-दबाते दास मात्र रह जाता है; दूसरे में आत्म जागरण की ऊँची सतह पर आ जाता है। यह सही है कि असभ्य देशों में लोकतंत्र नहीं चल सकता, किंतु इसमें भी कोई संदेह नहीं कि असभ्यावस्था से उपर ऊठते ही लोकतंत्र स्वयमेव स्थापित होने लग जाता है। लोकतंत्र में व्यक्तियों का विकास होता है; अधिनायकतंत्र में विनाश। इसके विपरीत अधिनायकतंत्र आतंक के आधार पर टिका रहता है, जिसके टूट गिरने पर राष्ट्र को भारी धक्का लगता है।

भारत में अधिनायकतंत्र—

वर्तमान युग में किसी देश की विद्यमान राज्य-प्रणाली को क्रांतिमय उपायों द्वारा नष्ट करने के बाद ही अधिनायकतंत्र (डिक्टेटर-शिप) स्थापित होता है। इस लक्षण के अनुसार तो पराधीन भारत

में अधिनातकतंत्र हो ही कैसे सकता है? पराधीन होने पर भी हिन्दुस्थान अपनी स्वाधीनता के लिये प्रयत्नशील है। १९३० ई० के स्वाधीनता-संग्राम के समय से पराधीनताजन्य संकटों के निवारणार्थ, स्वराज्य-संग्राम के संचालनार्थ अपने देश में भी अधिनायक (डिक्टेटर) की नियुक्ति की प्रथा प्रारंभ हुई। संग्राम-काल में प्रातिनिधिक सभाओं की बैठक करना कठिन जान अधिनायकों को ही सब कुछ अधिकार देकर कार्य चलाने की पद्धति चालू की गई। प्रत्येक अधिनायक (डिक्टेटर) अपनी गिरफ्तारी के समय अथवा उसके कुछ पहले ही अपने उत्तराधिकारी को मनोनीत कर देता था। इस प्रकार अधिनायकों की नियुक्ति केवल युद्ध-काल के ही लिये प्रचलित की गई। शांतिकाल में अधिनायकों को अपने अधिकार छोड़ देने पड़ते हैं और पुनः प्रातिनिधिक संस्था द्वारा पूर्ववत् कार्य होने लगता है। इस प्रकार हिन्दुस्थान में अधिनायकतंत्र का जन्म स्वराज्य-प्राप्ति के लिये राजनीतिक आंदोलन के द्वारा हुआ है।

भारतीय अधिनायकतंत्र की विशेषता—

भारतीय अधिनायकतंत्र की एक ऐसी विशेषता है, जो पहले किसी अधिनायकतंत्र में न थी। अन्य देशों के अधिनायकतंत्र हिंसात्मक रहे हैं, किंतु भारतीय अधिनायकतंत्र अहिंसात्मक रूप धारण करके आया है। इसे अहिंसक अधिनायकतंत्र (नन-वायलेंट डिक्टेटरशिप) कह सकते हैं।

स्वाधीनता-प्राप्ति के लिये सत्याग्रह-संचालन के निमित्त अधिनायकों की नियुक्ति की प्रथा जो अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) द्वारा निकली वह आगे चलकर देश में अन्य संस्थाओं द्वारा

भी काम में लाई जाने लगी। निज़ाम-राज्य में धार्मिक स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिये आर्य समाज ने जो सत्याग्रह किया था, उसके संचालनार्थ भी अधिनायक के रूप में 'सर्वाधिकारी' नियुक्त किए जाते थे।

भारतीय अधिनायकतंत्र का भावी रूप—

स्वाधीन भारत में अधिनायकतंत्र स्थापित होगा या लोकतंत्र—इसका अभी से निर्णय करना कठिन है। भारत में समाजवादी विचारों का प्रचार बढ़ रहा है। कांग्रेस में समाजवादी दल ही बन गया है। स्वाधीन भारत में कुछ काल के लिये यदि अधिनायकतंत्र स्थापित होगा तो उसका रूप भी समाजवादी अधिनायकतंत्र होगा—श्रमिक अधिनायकतंत्र। राज्य क्रांति के बाद जो पूर्ण स्वराज्य होगा, उसको सँभालने और सबल बनाने के लिये यदि अधिनायकतंत्र प्रणाली आवश्यक होगी तो उसमें कुछ न कुछ बल प्रयोग भी ज़रूरी होगा। अतः उस समय भारतीय अधिनायकतंत्र का रूप भी सत्याग्रह कालीन अधिनायकतंत्र के सामान पूर्ण अहिंसक न रह कर आवश्यकतानुसार थोड़ा बहुत हिंसायुक्त भी हो सकता है। इस अधिनायकतंत्र का रूप विदेशी अधिनायकतंत्रों जैसा नितांत बर्बरतापूर्ण और क्रूरतामय नहीं होगा; क्योंकि भारतीय संस्कृति की उस पर छाप रहेगी। भारतीय अधिनायकतंत्र की वैदेशिक नीति सार्वभौम हित का द्योतक होगी; फासिस्ट अधिनायकतंत्रों के समान साम्राज्यवाद मूलक नहीं।

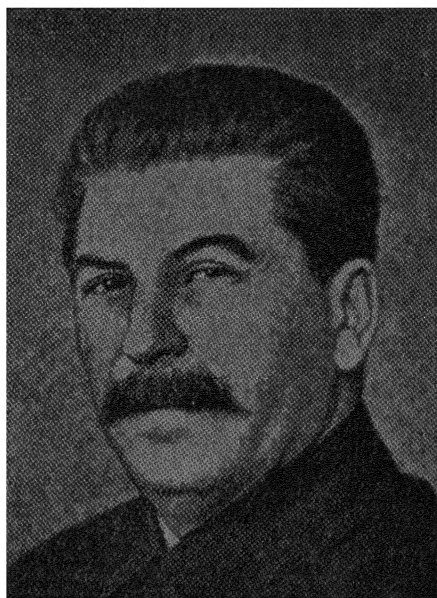
अधिनायकतंत्र का भविष्य—

अधिनायकतंत्र में अनेक दोषों के होते हुए भी अधिकांश देशों के लोग इसके गुणों पर मुग्ध हो उठे थे। महासमर (१९१४-१८) के

बाद अल्प काल में ही रूस, जर्मनी, इटली, आस्ट्रिया, पौलैंण्ड, टर्की, जुगोस्लाविया, लाटविया, रूमानिया, बलगेरिया, पुर्तगाल, स्पेन, अल्बानिया आदि देशों में पूर्ण अथवा आंशिक अधिनायकतंत्र की स्थापना हो गई। आधुनिक अधिनायकतंत्रों में स्पेन का ही अधिनायकतंत्र गृह-कलह तथा अन्य अधिनायकों के षडयंत्रों के कारण अल्पकाल में ही विनष्ट हो गया। यूरोप के बहुसंख्यक अधिनायकतंत्र जर्मन अधिनायकतंत्र के ग्रास बन गए। मुसोलिनी और हिटलर जैसे दुर्दांत अधिनायकों के विनाश एवं उनके समृद्ध अधिनायकतंत्रों के सर्वनाश को देख कर अधिनायकतंत्र की आंतरिक दुर्बलता—भीतरी कमज़ोरी का सहज ही पता लग जाता है। मुसोलिनी अपने देशवासियों को गोलियों का शिकार हुआ और हिटलर रूसियों द्वारा मारा गया। इटली और जर्मनी कुचल दिए गए हैं; बहुत दिनों के लिये दबा दिए गए हैं।

इस समय संसार में एक ही बलशाली अधिनायक स्टालिन भर बच रहा है। उसने जिस वीरता के साथ जर्मनों को पराजित कर रूस की रक्षा की है, वह विस्मय का विषय है। भविष्य में अन्य देशों में भी अधिनायकतंत्रों की स्थापना होगी अथवा स्थापितों का अवसान—यह कहा नहीं जा सकता। फिर भी जिन लोगों का लोकतंत्र में अटल विश्वास है, उनकी धारणा है कि अधिनायकतंत्र का अंत अति निकट है; उसकी मौत स्वयं उसके ही पापों से होगी। जनता स्वेच्छाचार को बहुत दिनों तक नहीं सहन कर सकती; अधिनायकों के सहयोगी भी सदा उनका साथ नहीं दे सकते। उनमें मतभेद एवं तनातनी का होना अवश्यंभावी है और यही अधिनायकतंत्र की मृत्यु का

पूर्व लक्षण है। आस्ट्रिया और जुगोस्लाविया के अधिनायक डोलफस और अलेकज़ेन्डर की हत्याएँ हुईं। अन्य अधिनायकों को भी अपने जीवन के लिये सदैव सतर्क ही रहना पड़ता है; कइयों को धमकियाँ दी गईं और कइयों पर प्रहार की भी चेष्टाएँ हुईं।

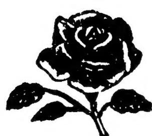


समाजवादी अधिनायक स्टालिन

मुसोलिनी एवं हिटलर के अंत के बाद लोगों के मन में जहाँ फासिस्ट अधिनायकतंत्र के प्रति विरक्ति दिखलाई पड़ती है, वहाँ रूस के समाजवादी अधिनायकतंत्र के प्रति अनुराग दृष्टिगोचर होता है। इस समय फासिस्ट अधिनायकतंत्र पर समाजवादी अधिनायकतंत्र की

विजय हो गई है। भविष्य में फासिस्ट अधिनायकतंत्र पुनः सिर उठा सकेगा या नहीं, कहना कठिन है।

अधिनायकतंत्र समाजवाद की अनिवार्य आवश्यकता है। समाजवादी शासन को सफल एवं सुदृढ़ बनाने के लिये क्रांति के बाद कुछ काल तक, जब तक कि पूँजीवाद की पूर्ण पराजय नहीं हो जाती, अधिनायकतंत्र का होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी होता है। क्रांति के बाद समाजवादी सत्ता के स्थापित हो जाने के पश्चात् पूँजीवाद की पूर्ण पराजय से अभिप्राय पहले के पूँजीपतियों के आचार-विचार से पूँजीवादी मनोवृत्ति को एकदम दूर कर देना तथा सर्वसाधारण में समाजवादी शासन के प्रति अनुराग और निष्ठा उत्पन्न कर देना है। इस प्रकार समाजवाद की वर्तमान प्रगति को देखते हुए सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि कुछ अंशों में सदोष होने पर भी अधिनायकतंत्र के लिये बहुत बड़ा क्षेत्र है; उसका भविष्य आशामय है।



नेशनल प्रेस, पटना। जौब २७—२१-७-४६—२०००।

प्रेस में

१ ज़मींदारी प्रथा—देश के लिये अभिशाप।
२ Zamindari System—a curse for the cou try.
३ खाद-विज्ञान।
४ पूँजीवाद—क्या, क्यों और कैसे?
५ समाजवाद—क्या, क्यों और कैसे?
६ अर्थशास्त्र।
७ लोकतंत्र-मीमांसा।
राजशास्त्र की रूप-रेखा।
९ मज़दूरों के मंत्रद्रष्टा—महर्षि मार्क्स।
१० अराजकतावाद—क्या, क्यों और कैसे?
११ स्वराज्य शब्द का इतिहास।
१२ स्वावलंबी ग्राम-जीवन।
१३ आदर्श ग्राम-जीवन।
१४ सामाजिक समस्याएँ (लोक जीवन की कहानियाँ)।
१५ उपनिषदों की उत्कृष्ट कहानियाँ (कहानी-कला और आध्यात्मिक जीवन का सरस समन्वय)।

सूचना—एक रुपया अग्रिम भेज कर स्थायी ग्राहक बनने से मूल्य में चौथाई रियायत।

जीवनप्रद साहित्य के प्रकाशन

की

अनुपम और अपूर्व योजनाएँ
